वैदिक परम्परा के ग्रन्थों में भगवान् ऋषभदेव

■ डॉ. मुनिलाल रंगा *

वैदिक वाङ्मय भगवान ऋषभदेव को जैन धर्म का संस्थापक मानता हुआ उन्हें अपना भी पूज्य नारायण का अवतार बतलाता है। भागवतपुराण के ऋषभावतार स्कन्ध में भगवान् ऋषभ को **गगन - परिधान:** अर्थात् आकाशरूप वस्त्र का धारक (दिगम्बर) कहा गया है -

स्वयं भवन एवोर्वरितशरीरमात्रपरिग्रह उन्मत्त इव गगनपरिधान: प्रकीर्ण केश आत्मन्यारोपिताहवनीयो ब्रह्मावर्त्तात्प्रवब्राज। (5.5.28)

भगवान् ऋषभदेव ने महामुनियों को श्रेष्ठ धर्म - परमहंस - धर्म - दिगम्बरत्व का उपदेश दिया था -

उपशमशीलानामुपरतिकर्मणां महामुनीनां
भक्तिज्ञानवैराग्य लक्षणं परमहंस्यधर्ममुपशिक्षमाण: ॥

इस कथन से यह अवश्य ज्ञात होता है कि वे परमहंस महामुनियों के लिए परमपूज्य तथा वंदनीय थे।

यहाँ प्रश्न उठता है कि ये ऋषभदेव वास्तव में कौन थे? किनते पुत्र थे? और इनके जीवन के यथार्थ का क्या उद्देश्य था? इन सभी विषयों पर भी भागवतपुराण और अधिक अच्छा प्रकाश डालता है।

''भागवतपुराण''[1] के एकादश स्कन्ध के द्वितीय अध्याय में कहा गया है कि स्वायंभुवमनु के पुत्र प्रियव्रत हुए हैं। इन्हीं प्रियव्रत के पुत्र आग्नीध्र और आग्नीध्र के पुत्र नाभिराज थे। इन्हीं नाभिराज और मरूदेवी के प्रतापी एवं विचक्षण बुद्धि सम्पन्न पुत्र का नाम ऋषभ था। यही ऋषभदेव मोक्षमार्ग के द्रष्टा होने से जैन धर्म में प्रथम तीर्थंकर माने गए हैं। वेदानुयायीगण इन्हें ही विष्णु का अंश ''वासुदेव'' मानते हैं। जैसा कि भागवत पुराण में आता भी है -

तमाहुर्वासुदेवासं मोक्षमार्गविवक्षया।[2]

भगवान् ऋषभदेव का जन्म संसार से छूटने के उपाय विशेष को बतलाने के लिए ही हुआ था। मुक्ति मार्ग की विवक्षा - उसका व्याख्यान करना ही उनके जन्म धारण करने का परम उद्देश्य था। मार्कण्डेयपुराण,[3] कूर्म,[4] विष्णु,,[5] स्कन्ध पुराण तथा ब्रह्माण्ड पुराण[6] में भगवान् ऋषभदेव के विषय में विपुल जानकारी उपलब्ध हैं।

भगवान ऋषभदेव ने अपनी तत्कालीन प्रजा विशेषकर अपने पुत्रों के कल्याणार्थ जो उपदेश दिया था उसे ही उपनिषदों में पराविद्या अथवा श्रेष्ठ विद्या बतलाया गया है।

मूलत: भगवान के उपदेश का प्राण अहिंसा है। 'अहिंसा परमोधर्म' की जैनधर्म में महान् प्रतिष्ठा है। इसी को भागवत में मान्यता देते हुए सन्यासी का प्रमुख धर्म शांति और अहिंसा ही बतलाया गया है। यहाँ कहा गया है कि वानप्रस्थी का धर्म है - भगवद्भाव तथा तपस्या करना। गृहस्थ का मुख्य धर्म है - जीवों की रक्षा तथा पूजापाठ करना तथा ब्रह्मचारी का धर्म है - आचार्य की सेवा करना -

भिक्षोधर्म: शमो हिंसा तप ईक्षा वनौकस:।
गृहणो भूत रक्षेज्या द्विजस्याचार्यसेवनम्॥ 11.18.42

महाभारत में अहिंसा से ही स्वर्ग लाभ बतलाया गया है -

अहिंसासमायुक्तै: कारणै: स्वर्गमश्नुते। 10.181

मार्कण्डेयपुराण में नारायण ऋषभदेव के सौ पुत्र होने का उल्लेख मिलता है जिसमें सबसे बड़े पुत्र भरत थे। भगवान ने इन्हीं भरत को सुयोग्य प्रशासक समझकर हिमालय का दक्षिणावर्ती भाग प्रशासन हेतु दिया था। चक्रवर्ती भरत के नाम पर ही उक्त भू भाग का नाम भारतवर्ष पड़ गया -

ऋषभात् भरतो जज्ञे वीर: पुत्रशताद्वर:।
सोऽभिषिच्यर्षभ पुत्रं महाप्राव्राज्यमास्थित:॥
हिमाह्वयं दक्षिणं वर्ष भारताय पिता ददौ।
तस्माच्च भारतं वर्ष तस्य नाम्ना महात्मन:॥39 - 41

विष्णुपुराण, ब्रह्माण्डपुराण, स्कन्ध पुराण एवं कूर्मपुराण से भी इसका समर्थन होता है। भागवतपुराण में भी आता है -

तेषां वै भरतौ ज्येष्ठ: नारायणपरायण:।
विख्यातं वर्षमेतद् यन्नामा तम्॥ 11.2.17

भागवत पुराण में भगवान ऋषभदेव को विष्णु नाम का नवम अवतार कहा गया है -

अपत्यतामगाद्यस्य हरिशुद्धेन कर्मणा।5.4.6

ऋग्वेद में वामनावतार का उल्लेख मिलता है और चौबीस नारायण के अवतारों में वामनावतार का स्थान 15 वाँ है। इस प्रकार भगवान ऋषभ का आविर्भाव निश्चित बहुत पहिले सिद्ध होता है। दूसरे, गीता में एक स्थल में भगवान श्रीकृष्ण अपने प्रिय उपासक शिष्य अर्जुन को ध्यानयोग की महत्ता प्रतिपादित करते हुए कहते हैं कि हे अर्जुन। इस योग का उपदेश सूर्य से मनु को प्राप्त हुआ था और मनु ने अपने पुत्र इक्ष्वाकु को इसे समझाया था। कारण कि वह योग बहुत समय से इस लोक से नष्ट हो गया था -

स कालेनेह महता योग नष्ट: परंतप॥ 4.2॥
स एवायं मया तेऽद्य योग प्रोक्त:पुरातन:॥ 4.3॥

भागवतपुराण के पञ्चम स्कन्ध में भगवान ऋषभदेव द्वारा अपनी प्रजाजन को अध्यात्मयोग का उपदेश देने का उल्लेख मिलता है -

भगवान ऋषभदेवो योगेश्वर:॥ 5.5.9॥
अध्यात्मयोगेन विविक्तसेवयाप्राणेन्द्रियात्माभिजयेन सम्यक्॥ 5.5.2.॥

उक्त इक्ष्वाकु और अध्यात्मयोगोपदेष्टा और अन्य कोई नहीं भगवान ऋषभदेव ही सिद्ध होते हैं। जिन्होंने स्वयं सर्वप्रथम योग मुद्रा में कैवल्य प्राप्त किया था,[7] जिसका प्रबल प्रमाण मोहनजोदड़ों और हड़प्पा से उपलब्ध मूर्तियों में स्पष्ट झलकता है। इन सभी प्रमाणों से यह स्वत: सिद्ध हो जाता है कि जैन धर्म के संस्थापक प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव ऋग्वेद की रचना से बहुत पहिले हो चुके थे।

पुराणग्रन्थों में ऋषभदेव को वृषभ, वृषभनाथ, महादेव तथा आदिदेव नाम मिलते हैं -

वृषाही वृषभो विष्णुर्वृषपर्वा वृषोदर:।[8]
आदिदेवो महादेवो देवेशो देवभृदगुरू॥

(विष्णु सहस्रनाम, श्लो. 65)

विश्व के प्राचीनतम ग्रन्थ ऋग्वेद को भी देखना चाहिए जहाँ ऋषभ का स्पष्ट उल्लेख मिलता है। इसके लिए निम्न दो मंत्र पर्याप्त हैं -

1. ऋषभं माससमासानां सपत्नानां विषासहि।
हन्तारं शत्रूणां कृधि विराजं गोपितं गवाम्॥ 101.21.66॥

2. एवा ब्रभे वृषभ चेकितान यथा देव न हृलीषे न हंसि॥ 2.33.15॥

इस प्रकार जैन धर्म में मान्य एवं आराध्य आदिनाथ, वृषभनाथ, ऋषभदेव वैदिक साहित्य में जिन्हें गौरव एवं सम्मान के साथ उल्लिखित किया गया है, सुदूर पूर्व में आविर्भूत ऐतिहासिक महापुरूष सिद्ध होते हैं।

अत्यन्त हर्ष है कि ऐसे महापुरुष की जन्म जयन्ती के उपलक्ष्य में दि. जैन त्रिलोक शोध संस्थान हस्तिनापुर (मेरठ) भगवान ऋषभदेव राष्ट्रीय कुलपति सम्मेलन का आयोजन दिनांक 4-6 अक्टूबर, 1998 में कर रहा है। महान् पुण्यकार्य में जैन समाज अग्रसर है। पूज्य गणिनी प्रमुख, आर्यिका शिरोमणि श्री .ज्ञानमती माताजी इस आयोजन की यथार्थ प्रेरिका हैं। तपस्वी सन्तों का मार्गदर्शन आधुनिक युग में बड़ा दुर्लभ है। जैन समाज इस विषय में अधिक धनी है जिन्हें उक्त आर्यिकारत्न उपलब्ध हैं। नि:संदेह यह निर्विघ्न सम्पन्न सम्मेलन भगवान ऋषभदेव के जीवन दर्शन तथा उपदिष्ट सिद्धान्तों पर नये तथ्यों को उजागर करेगा जिससे भगवान ऋषभदेव को और उनके द्वारा प्रतिपादित अहिंसा, अनेकान्त, अपरिग्रह तथा ध्यानयोग विषयक मान्यता को विश्व में सम्यक् प्रकार से समझा जायेगा, उन्हें यथोचित स्थान एवं सम्मान भी मिलेगा।

भगवान ऋषभदेव द्वारा बतलाया गया अहिंसक मार्ग ही विश्व शान्ति का अमोधशास्त्र भी है। इन्हीं कतिपय शब्दों के साथ मैं सम्मेलन के समस्त आयोजकों का धन्यवाद करता हूँ, जिन्होंने मुझे इतना अधिक सम्मान दिया। पूज्य आर्यिकारत्न माता श्री ज्ञानमती जी के चरण कमलों में सादर नमन।

सन्दर्भ -

1. प्रियव्रतो नाम सुतो मनो स्वायंभुवस्य य:।
तस्याग्नीध्रस्ततो नाभि - ऋषभस्तत्सुतस्मृत:॥ 1.2.15
2. वही, 11.2.16
3. मार्कण्डेयपुराण 50, 39 - 42
4. कूर्मपुराण 41, 37 - 38
5. विष्णुपुराण 2.1.27
6. स्कन्धपुराण, कुमार खण्ड 37.7.
7. ब्रह्माण्डपुराण 14, 61
8. नानायोगचयचिरणो भगवान कैवल्पति ऋषभ:। भागवतपुराण 5.5.35
9. विष्णु सहस्रनाम, श्लो.4

* कुलपति
कुरुक्षेत्र वि.वि.,
कुरूक्षेत्र (हरियाणा)